शोध मंथन, Impact Factor 6.726 (SJIF), UGC No. 40908 ISSN: (P): 0976-5255 (e): 2454-339X
Vol. X, No.II, pp (675-681) April - June 2019

भारतीय राजनीतिक चिन्तन व भारत के राष्ट्रीय आन्दोलन में तिलक का योगदान

डॉ. विक्रम सिंह
जयपुर (राज.)
Email:drvikramdevpura@gmail.com

सारांश

लोकमान्य तिलक भारतीय राजनीतिक एवं सामाजिक चिन्तन के अद्वितीय विचारक थे। शिरोल ने उन्हें 'भारत में असंतोष के जनक' के रूप में सम्बोधित करके भारतीयों की सेवा ही की थी। तिलक ने न केवल भारतीयों को शासन के रवैये के प्रति ही असन्तुष्ट बनाया अपितु उन्हें अपने आपके विकास के प्रति भी संतुष्ट होकर नहीं बैठने दिया। दासता में संतोष कर बैठने वाले भारतीय स्वतंत्रता–संग्राम का संचालन नहीं कर सकते थे। तिलक ने उन्हें नया जीवन, नई प्रेरणा दी। उन्होंने अपना वर्तमान भारत के सुखद स्वप्निल भविष्य के लिए देश को अर्पित कर दिया। तिलक ने न केवल राजनीतिक सिखाई, न केवल धर्म का उपदेश दिया बल्कि देश के लिए सहर्ष यातनाएं सहन करने का मार्ग भी दिखाया। सुख समृद्धि, परिवार तथा महत्वाकांक्षाओं का परित्याग कर तिलक ने वह मार्ग अपनाया जो शहीदों के निमित्त था। राजद्रोह के भयंकर अभियोग द्वारा शासन ने उनका मनोबल झकझोरना चाहा किन्तु वे चट्टान की तरह अड़िग रहे।

तिलक ने भारत की प्राचीन संस्कृति और जीवन मूल्यों को भातीय राष्ट्रवाद का सुदृढ़ आधार बनाया। भारत में राष्ट्रीयता के संचार के लिए उन्होंने पश्चिमी मूल्यों, विचारों और संस्थाओं को प्रेरक शक्ति मानना अस्वीकार किया और यह स्पष्ट किया कि जब तक भारतीय अपनी प्राचीन संस्कृति और जीवन मूल्यों के प्रति गौरव की अनुभूति से ओत–प्रोत नहीं होंगे, तब तक उनमें विदेशी शासन की अधीनता के कारण आ गई हीन भावना का निराकरण नहीं होगा।

तिलक ने स्वीकार किया कि भारत में राष्ट्रीयता का विकास सभी सम्प्रदायों के मध्य पारस्परिक सौहार्द और विश्वास पर निर्भर था। इस कारण उन्होंने हिन्दुओं और मुसलमानों के मध्य पारस्परिक समझ–बूझ व सह–अस्तित्व की भावना का समर्थन किया, वहीं अंग्रेजों की इन दोनों समुदायों के मध्य विद्वेष और अविश्वास उत्पन्न करने की नीति का कड़ा विरोध किया।

तिलक की स्वराज्य की धारणा में प्राचीन भारतीय राजनीतिक चिन्तन का मर्म निहित था। जिस प्रकार प्राचीन भारतीय आचार्यों ने धर्म को शासन की मूल प्रेरणा के रूप में स्वीकार किया, तिलक भी स्वराज्य के माध्यम से देश में धर्म राज्य की स्थापना करना चाहते थे, किन्तु धर्म राज्य से तिलक का आशय किसी विशेष धार्मिक सम्प्रदाय की मान्यताओं पर आधारित राजनीतिक प्रणाली से नहीं था। तिलक ने धर्म के व्यापक और शाश्वत पक्ष को स्वीकार किया, जिसका शाश्वत नैतिक मूल्य जन–कल्याण शासन की मूल प्रेरणाएं बन जाए।

तिलक आधुनिक भारतीय लोकतंत्र के प्रणेता है। जन शक्ति ही उनकी उपासना की देवी थी। इसी कारण उनकी राजनीति लोकतंत्र की राजनीति हुई। उन्होंने व्यक्ति की महिमा को बढ़ावा नहीं दिया। इसके विपरित सामूहिक विचार, सामूहिक आचार तथा सामूहिक आन्दोलन ही उनकी युद्धकला का तंत्र था। यही कारण है कि तिलक भारतीय लोकशक्ति की गंगोत्री है। लार्ड सिडनहम ने जो बम्बई के तत्कालीन गवर्नर थे, ब्रिटिश सरकार को 1908 में लिखे अपने एक गुप्त पत्र में कहा था कि ''तिलक ही ब्रिटिश साम्राज्य को उलट देने वाले षड़यंत्र के मुख्य सूत्रधार है।''

तिलक आधुनिक भारत के 'हरक्यूलीज़' तथा 'प्रोमेथियस' ही नहीं अपितु ''भारतीय राष्ट्रवाद के पिता थे।'

प्रस्तावना

तिलक का जन्म महाराष्ट्र के कोकण जिले के रत्नगिरि में 23 जुलाई, 1856 को हुआ था। गोखले की भांति वे भी महाराष्ट्र के प्रसिद्ध चित्तपावन ब्राहम्ण समुदाय के थे। उनके पिता गंगाधर तिलक शिक्षक थे और वे संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान थे। गणित पर भी उनका अच्छा अधिकार था। तिलक को इन दोनों विषयों का आधारभूत ज्ञान अपने पिता से ही प्राप्त हुआ था। तिलक की माँ पार्वती एक धार्मिक एवं कर्मकाण्ड में आस्था रखने वाली महिला थी। जब तिलक 10 वर्ष के थे, तब ही उनकी माँ का स्वर्गवास हो गया था। इसी उम्र में वे अपने पिता के साथ पूना आ गये और वहां के एंग्लो वर्नाक्यूलर स्कूल में उनकी शिक्षा प्रारम्भ हुई। पूना आने से तिलक को उच्च शिक्षा प्राप्त करने के अवसर सहज़ ही उपलब्ध हो गये। तिलक ने 1876 में बी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की। सन् 1879 में उन्होंने एलएल.बी. की परीक्षा उत्तीर्ण की। वकालत की डिग्री प्राप्त करने के पीछे तिलक का निश्चित उद्देश्य राष्ट्र सेवा था और इससे यह प्रकट होता है कि अपने विद्यार्थी–जीवन में ही तिलक राष्ट्रीय सेवा का कठोर व्रत ले चुके थे। उदारवादी रीति–नीति की असफलता की सहज़ प्रतिक्रिया में, देश के विभिन्न हिस्सों में राष्ट्रवादी आन्दोलन की धारा फूटने लगी। पंजाब में लाला लाजपतराय, बंगाल में विपिन चन्द्र पाल और महाराष्ट्र में लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ने राष्ट्रवादी चेतना का शंखनाद किया। कांग्रेस के मंच पर इन नेताओं के सामूहिक प्रयत्नों से राष्ट्रवादी आन्दोलन को अखिल भारतीय स्वरूप प्राप्त हुआ। कांग्रेस में राष्ट्रवादियों की यह त्रिमूर्ति लाल–बाल–पाल के नाम से विख्यात हुई। इस त्रिमूर्ति में तिलक वरिष्ठतम तो थे ही, इन सब में प्रमुख भी थे। उनके विषय में महर्षी अरविन्द ने लिखा था– ''वे भारत के दो या तीन ऐसे प्रमुखतम व्यक्तियों में से थे, जिनकी सम्पूर्ण देश ने आराधना की और अनुसरण किया।''

तिलक के राजनीतिक विचार

तिलक ने राजनीतिक प्रश्नों पर मौखिक दषश्टिकोण का प्रतिपादन किया। स्वतंत्र्य, स्वराज्य, राज्य के प्रयोजनों, राज्य, व्यक्ति व समाज के संबंधों आदि पर तिलक ने जो विचार व्यक्त किये हैं, उनके दृष्टिकोण और वैचारिक स्पष्टता को उजागर करते हैं। **व्यक्ति की स्वतंत्रता और आध्यात्मिक धारणा–** तिलक व्यक्ति के व्यक्तित्व पर

बाध्यकारी नियन्त्रणों को अनैतिक मानते थे। स्वतंत्रता की उनकी धारणा, उनकी आध्यात्मिक आस्था से ही निर्धारित हुई थी। भारतीय अद्वैतवाद में गहरी आस्था होने के कारण तिलक सभी मनुष्यों को निरपवाद परमात्मा का अंश स्वीकार करते थे। इस प्रकार उनके लिए व्यक्ति की स्वतंत्रता का निषेध, ईश्वर की सत्ता के निषेध के समान ही आपत्तिजनक और अपवित्र था।[1] तिलक के लिए स्वतंत्रता व्यक्ति की बाहरी नियन्त्रणों से मुक्ति का नकारात्मक परिणाम नहीं, अपितु व्यक्ति की ऐसी सामर्थ्य के रूप में समझी जा सकती थी, जिसके द्वारा वह अपने ईश्वरीय अंश को, व्यक्तिगत व सामाजिक जीवन में प्रतिबिम्बित कर सके। इस प्रकार राजनीतिक स्वतंत्रता तिलक के लिए स्वयं में साध्य नहीं थी अपितु वह व्यक्ति की आध्यात्मिक स्वतंत्रता की पूर्व शर्त थी तथा अनिवार्य रूप से उसकी पूरक थी। व्यक्ति की स्वतंत्रता के प्रति तिलक का नैतिक आग्रह, राष्ट्रों की स्वतंत्रता के प्रति उनके दृष्टिकोण में भी पूर्णतः परिलक्षित हुआ। राष्ट्रों की स्वतंत्रता और आत्मनिर्णय के अधिकार के प्रति का आग्रह, भारतीय दर्शन और पश्चिमी उदारवादी आग्रहों के विलक्षण समन्वय का उदाहरण था। उन्होंने राष्ट्र की जॉन स्टुअर्ट मिल द्वारा की गई परिभाषा को स्वीकार किया।[2] उन्होंने 1919 में विल्सन द्वारा घोषित राष्ट्रीय आत्मनिर्णय के सिद्धान्त का समर्थन किया, उन्होंने इसी सिद्धान्त को भारत के संबंध में क्रियान्वित किये जाने का आग्रह किया।[3]

2 **राज्य के प्रयोजनों के संबंध में उपयोगितावादी तर्कों का विरोध–** तिलक ने राज्य की प्रकृति तथा उद्देश्य के संदर्भ में उपयोगितावाद की आलोचना की है। वे सुख वाद के संख्यात्मक आधार 'अधिकतम व्यक्तियों के अधिक से अधिक सुख को' उचित नहीं मानते। नैतिकता संबंधी प्रश्नों का संख्यात्मक निर्णय त्रुटिपूर्ण होता है।[4] तिलक ने गीता–रहस्य में कौरवों तथा पाण्डवों का उदाहरण देते हुए यह विचार प्रश्न किया है कि क्या पाण्डवों की सेना संख्या में कौरवों की सेना से कम होने के कारण दोषी थी और पाण्डवों को हराने पर कौरवों की संख्यात्मक आधार पर अधिकतम सुख की प्राप्ति होती? साधारण जनमानस द्वारा जिस वस्तु को सुख उत्पन्न करने वाली माना जाता है, उसे दूरद्रष्टा हानिप्रद बतलाते है।[5] उदाहरण के लिए सुकरात तथा यीशू अपने देशवासियों को कल्याणकारी उपदेश दे रहे थे, किन्तु उनके देशवासियों ने उनकी भर्त्सना कर उन्हें समाज का शत्रु करार देकर मृत्युदण्ड़ दिया। तिलक के अनुसार नैतिक गणित का सिद्धान्त इस प्रश्न का कि सहस्त्रों व्यक्तियों का सुख किसमें है और उसकी प्राप्ति कैसे और किसके द्वारा हो सकती है, उचित समाधान प्रस्तुत नहीं करता। यह सिद्धान्त अत्यधिक यांत्रिक है और इसमें व्यक्ति के उद्देश्यों का समावेश नहीं किया गया है। इसी तरह उपयोगितावाद यह नहीं दर्षाता कि परहितवाद स्वार्थवाद से क्यों अच्छा है। यदि परहित का उद्देश्य यह है कि दूसरों के हित की रक्षा करने से स्वयं के हितों की रक्षा होती है और इस प्रकार अधिक से अधिक व्यक्तियों को अधिकतम लाभ हो सकता है तो यह उचित नहीं। मूल प्रश्न यह है कि हम अधिक से अधिक

व्यक्तियों को कैसे सुखी बनाये। तिलक ने नैतिक प्रश्नों का भौतिकवादी समाधान स्वीकार नहीं किया। जीवन में भौतिक वस्तुओं की उपलब्धि ही सब कुछ नहीं। उच्च कार्यों का सद्–विवेक एवं मस्तिष्कजन्य उपलब्धियों से मानव–कल्याण एवं सुख की प्राप्ति सर्वश्रेष्ठ है। इन्द्रियजन्य सुख निम्न कोटि का सुख है।[6]

3 **स्वराज्य की धारणा**– तिलक ने ब्रिटिश शासन से स्वराज्य प्राप्ति के संदर्भ में ब्रिटेन के सम्राट की स्थिति को ब्रह्म की तरह अपरिवर्तनशील माना और वास्तविक शासन को ''माया' की संज्ञा दी। जिस प्रकार से बह्म की स्थिति को परिवर्तित नहीं किया जा सकता, उसी प्रकार ब्रिटिश सम्राट को परिवर्तित करने की आवश्यकता नहीं। माया के परिवर्तनकारी स्वरूप को शासन के परिवर्तनों के सदर्श माना जा सकता है। शासन में परिवर्तन का अर्थ है, ऐसी सरकार की स्थापना जो जनहित में कार्य करें। नौकरशाही के हाथों से शासन लेकर जनता के प्रतिनिधियों को सौंप दिया जाए। स्वराज का यही अर्थ है कि भारत के शासन पर नौकरीशाही का नियन्त्रण जनता को हस्तानान्तरित कर दिया जाए। जिस प्रकार से इंग्लैण्ड में सम्राट की स्थिति एक नाम मात्र के शासन की ओर समस्त कार्य मंत्रियों की सलाह पर होता है, उसी तरह भारत में जन–प्रतिनिधियों के हाथों में वास्तविक सत्ता होनी चाहिए। ब्रिटेन में मंत्रीमण्डल में परिवर्तन होते है और सत्ता बदलती है किन्तु भारत में अंग्रेजी नौकरशाही अपरिवर्तनशील है। उसे बदलने का प्रयास देशद्रोह माना जाता है। क्या इंग्लैण्ड में भी ऐसे प्रयासों को देशद्रोह की संज्ञा दी जा सकती है ? सम्राट की स्थिति को यथावत बनाये रखते हुए भारत का शासन भारतीयों के हाथों होना ही स्वराज्य है। दुर्भाग्य से स्वराज्य का इंग्लैण्ड में उपभोग करने वाली अंग्रेजी सत्ता भारत में स्वराज्य की मांग को अस्वीकृत कर रही है। तिलक ने स्पष्ट किया कि स्वराज्य की मांग को देशद्रोही समझना व्यर्थ है। यह सम्राट की सत्ता को चुनौती नहीं अपितु जनता से संबंधित कार्यों पर जनता के नियंत्रण की मांग है। तिलक ने यह भी व्यक्त किया कि भारत में स्वशासन का अधिकार किसी भी दल को सौंपा जाये, चाहे उदारवादियों को अथवा उग्रवादियों को या पुलिस के सिपाही को ही, यह अधिकार क्यों न दिया जाये, उन्हें कोई आपत्ति नहीं। मूल प्रश्न स्वराज्य का है, अधिकारों का है।[7] उन्होंने घोषित किया कि स्वराज्य की उनकी मांग में ब्रिटिश सम्राट के प्रति कोई दुर्भावना या विद्वेष नहीं था। उन्होंने कहाः ''मैं यह भली–भांति स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि हम भारत में ऐसा स्वराज्य चाहते है, जैसे स्वराज्य की मांग आयरलैण्ड के स्वराज्यवादी कर रहे है, अर्थात प्रशासनिक व्यवस्था में गुणात्मक सुधारों की मांग, न कि सरकार को उखाड़ फैंकने की मांग; और मुझे यह कहने में कोई संकोच नहीं है कि देश के विभिन्न हिस्सों में हिंसा की जो घटनाएं हुई है, उन्होंने न केवल मुझे क्षुब्ध किया है, अपितु उन्होंने न केवल मुझे क्षुब्ध किया है, अपितु उन्होंने दुर्भाग्यपूर्ण रीति से हमारी भावी राजनीतिक प्रगति को गंभीर क्षति पहुँचाई है। हिंसा की घटनाओं की व्यक्तिगत और सार्वजनिक दोनों दृष्टियों से निदा की जानी चाहिए।[8]''

4 **साधनों के प्रति दृष्टिकोण–** राजनीतिक आन्दोलन के लिए उदावादियों द्वारा अपनाये जा रहे साधनों से तिलक पूर्णतः असहमत थे। जनता के राजनीतिक अधिकारों की प्राप्ति के लिए, शासकों की दया, सहदयता व सहानुभूति पर निर्भर करना वे उचित नहीं मानते थे। उन्होंने उदारवादियों के साधनों–अनुनय, आग्रह और प्रतिरोध की निरर्थकता और प्रभावहीनता पर कटाक्ष करते हुए कहा ''तीन 'प्र'कृ 'प्रार्थना', 'प्रसन्न करना' और 'प्रतिरोध से कुछ नहीं होगा, जब तक की इनके पीछे ठोस शक्ति नही हो। आयरलैण्ड, जापान और रूस के उदाहरणों से हमें सबक लेना चाहिए। षासकों की अब एक निश्चित नीति है और आप उन्हें उस नीति को परिवर्तित करने के लिए कह रहे है। इससे अधिक से अधिक यह होगा कि वे शुद्ध निरंकुशता की जगह जाग्रत निरंकुशता को अपना ले, ब्रिटिश लोगों को शिक्षित करने से ही अधिक परिणामों की आशा करना व्यर्थ है। आप उन्हें शब्दों से सहमत नहीं कर सकते।[9] तिलक ने स्पष्ट किया कि वे इन साधनों की तुलना में अधिक प्रभावी, सक्रिय और ओजपूर्ण साधन अपनाये जाने के पक्ष में है। उन्होंने कहा– ''इतिहास में ऐसा कोई उदाहरण नहीं है कि कोई साम्राज्य, शासकों द्वारा शासितों को उदारतापूर्ण रियायते देने के कारण नष्ट हो गया हो, किन्तु इतिहास में ऐसा भी कोई उदाहरण नहीं है, जब किसी साम्राज्य का इस कारण अंत हो गया हो कि शासकों में स्वेच्छा से शासितों को सत्ता का हस्तान्तरण कर दिया हो।'[10] उन्होंने यह स्पष्ट किया कि जब तक भारतीय जनता, ब्रिटिश सरकार से संघर्ष के लिए संगठित नहीं होती, तब तक ब्रिटिश शासकों से भारतीय जनता की न्याय सम्मत मांगों के प्रति किसी भी समर्थन की अपेक्षा करना व्यर्थ है।

5 **स्वेदशी, बहिष्कार व निष्क्रिय प्रतिरोध**– तिलक स्वदेशी को राजनीतिक आन्दोलन का एक पुभावी अस्त्र मानते थे, किन्तु उनके लिए स्वदेशी का विचार आन्दोलन का एक स्वरूप मात्र नहीं था अपितु राष्ट्र की आत्मनिर्भरता, आत्मसम्मान और विदेशी प्रभाव से मुक्ति का प्रतीक भी था। यद्यपि स्वदेशी के विचार का सूत्रपात तिलक से पूर्व ही स्वामी दयानन्द सरस्वती जैसे समाज सुधारकों द्वारा कर दिया गया था, किन्तु तिलक ने इस विचार को न केवल लोकप्रियता प्रदान की, अपितु इसे ब्रिटिश सत्ता के विरूद्ध भारतीयों के विरोध की अभिव्यक्ति का एक प्रभावशाली माध्यम बना दिया। तिलक के अनुसार स्वदेशी का विचार आर्थिक और नैतिक दोनों दृष्टियों से भारतीयों के हितों को सुनिश्चित करना था।

- **बहिष्कार आन्दोलन–** तिलक बहिष्कार आन्दोलन को केवल आर्थिक क्षेत्र तक सीमित नहीं रखना चाहते थे। वे इसका विस्तार करके, इसके माध्यम से ब्रिटिश प्रशासन को पूर्णतः ठप्प कर देना चाहते थे। उनकी मान्यता थी कि यदि भारतीय जनता ब्रिटिश सरकार से सहयोग करना बन्द कर दे तो, ब्रिटिश सरकार के लिए भारत का शासन चलाना असम्भव हो जायेगा।

- **निष्क्रिय प्रतिरोध–** तिलक के बहिष्कार के विचार का ही संगठित पक्ष था। निष्क्रिय प्रतिरोध का अर्थ था कि शासन के संचालन में जनता द्वारा सहयोग देना बन्द कर देना। वस्तुतः यह बहिष्कार के विचार का ही सक्रिय राजनीतिक रूपान्तरण था। तिलक की दृढ़ मान्यता थी कि शासितों के सहयोग के बिना शासन चलाया जाना असम्भव है। निष्क्रिय प्रतिरोध के अनुसार यह ऐसा उपाय था, जिसके द्वारा जनता हिंसक साधनों को अपनाए बिना ही स्वराज्य की प्राप्ति के लिए प्रभावी ढ़ंग से आन्दोलन कर सकती थी।

6 हिंसक साधनों में अविश्वास– उदारवादियों द्वारा अपनाये जा रहे साधनों की पर्याप्तता के प्रति तिलक के संदेह तथा 'अनुनय–विनय' और 'ज्ञापन' की अपेक्षा राजनीतिक आन्दोलन के सक्रिय और प्रभावशाली उपायों के प्रति उनके दृढ़ आग्रह के कारण उनके विषय में यह भ्रम उत्पन्न करने का प्रयत्न किया गया कि तिलक क्रांतिकारी या हिंसक गतिविधियों के माध्यम से स्वराज्य की प्राप्ति के पक्षधर थे किन्तु तिलक के विचारों का निष्पक्ष विश्लेषण यह सिद्ध करता है कि वे कभी भी हिंसक साधनों के माध्यम से स्वराज्य की प्राप्ति के पक्षधर नहीं थे।

7 राष्ट्रवाद– तिलक उत्कृष्ट राष्ट्रवादी थे। वे उदारवादियों की भांति, पश्चिमी विचारों, मूल्यों और संस्थाओं को भारतीय राष्ट्रवाद का आधार नहीं बनाना चाहते थे। उनकी मान्यता थी कि प्राचीन संस्कृति और मूल्यों को ही भारत में राष्ट्रवाद के प्रसार के माध्यम से भारतीय संस्कृति के गौरवमय मूल्यों को पुन प्रतिष्ठित करना चाहिए। भारत की प्राचीन संस्कृति और विचारों को वे राष्ट्रवाद प्रेरक शक्ति के रूप में प्रयुक्त करना चाहते थे। उनके राष्ट्रवाद में भारत के स्वर्णिम अतीत की गौरवानुभूति और भारत के समृद्ध भविष्य की आकांक्षा का समन्वय था। वी.पी. वर्मा ने तिलक के राष्ट्रवाद को 'पुनरूत्थानवादी राष्ट्रवाद' का नाम दिया है। तिलक ने शिवाजी और गणपति उत्सवों को इसी कारण प्रोत्साहन दिया कि उनके माध्यम से भारतीय जनता वर्तमान घटनाओं और आन्दोलनों का ऐतिहासिक परम्पराओं से संबंध जोड़ सके।[11]

तिलक संकीर्ण राष्ट्रवादी नहीं थे। अपने संस्कृत पांडित्य के कारण वेदान्त के गूढ़ रहस्यों में उनकी विशेषगति थी। वेदान्त की मानव एकता की धारणा को राष्ट्रवाद के माध्यम से प्राप्त कर विश्वबन्धुत्व की स्थापना तिलक का अंतिम ध्येय था। वे अन्तर्राष्ट्रवाद को राष्ट्रवाद का ही उन्नत रूप मानते थे।

8 साम्प्रदायिक सद्भाव– तिलक संकीर्ण हिन्दू राष्ट्रवादी नहीं थे। उनके द्वारा महाराष्ट्र में चलाये गये जन–आन्दोलन में उन्हें सभी सम्प्रदायों का समर्थन प्राप्त होता रहा। 1916 के कांग्रेस के लखनऊ अधिवेशन में तिलक ने हिन्दुओं तथा मुसलमानों में साम्प्रदायिक समझौता करवाने का सफल प्रयास किया। उनके सहिष्णुता दृष्टिकोण के कारण मुसलमानों को पृथक्क प्रतिनिधित्व देने का निर्णय कांग्रेस ने स्वीकार किया। मुसलमान नेताओं में उनके प्रति गहरी श्रद्धा थी। शौकत अली तथा मौहम्मद अली अपने आपको

तिलक की पार्टी का ही मानते थे।[12] मौलाना हज़रत मौहानी ने तिलक को अपना राजनीतिक गुरू माना था। अस्फ़ाक अली तथा मौ. अंसारी ने ख़िलाफत आन्दोलन के समक्ष मुसलमानों के प्रति तिलक के सहानुभूतिपूर्ण समर्थन एवं सहयोग का उल्लेख किया था। इस प्रकार तिलक ने एक धर्मनिष्ठ सनातनी हिन्दू होते हुए भी अपने धार्मिक विश्वास का अन्य सम्प्रदायों के अहित में प्रयोग नहीं किया।

संदर्भ ग्रंथ

1 बाल गंगाधर तिलकः *हिज राइटिग्स एण्ड स्पीचेज,* गणेश एण्ड को. मद्रास, 1922, तृतीय संस्करण पृष्ठ **346–47**

2 बाल गंगाधर तिलकः *हिज राइटिग्स एण्ड स्पीचेज,* गणेश एण्ड को. मद्रास, 1922, तृतीय संस्करण पृष्ठ **138**

3 वी.पी. वर्मा, *आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तन,* पृष्ठ–252, लक्ष्मीनारायण अग्रवालः आगरा–2000

4 डी.एस. जौल, *रोजन एण्ड रिबेलियन,* (प्रेटिल हाल, न्यूयार्क, 1963) पृष्ठ–**253**

5 बाल गंगाधर तिलक, *श्री मदभगवद् गीता रहस्य अर्थात कर्म योग शास्त्र* (तिलक ब्रदर्श, पूजा 1935), खण्ड़–I, पृष्ठ **114–128**

6 बाल गंगाधर तिलक, *श्री मदभगवत गीता रहस्य अर्थात कर्म योग शास्त्र* (तिलक ब्रदर्श, पूजा 1935), खण्ड़–I, पृष्ठ **114–128**

7 डी.वी. तहमानकर, *लोकमान्य तिलकः फादर ऑफ इण्डियन अनरेस्ट एण्ड दी मेकर ऑफ मॉर्डन इण्डिया (*जान मरे, लंदन 1956), पृष्ठ **128–130**

8 बाल गंगाधर तिलकः *हिज़ राइटिग्स एण्ड स्पीचेज* (गणेश एण्ड को. मद्रास 1922, तृतीय संस्करण) पृष्ठ **346–47**

9 सूद जे.पी.: *मैन करंट्स ऑफ सोशल एण्ड पॉलिटिक्स थॉट इन मॉर्डन इंडिया,* जयप्रकाशनाथ, मेरठ, 1963, पृष्ठ **25**

10 सूद जे.पी.: *मैन करंट्स ऑफ सोशल एण्ड पॉलिटिक्स थॉट इन मॉर्डन इंडिया,* जयप्रकाशनाथ, मेरठ, 1963, पृष्ठ **45**

11 वी.पी. वर्मा, *आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तन,* पृष्ठ–**252,** लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा–2000

12 एस.वी. वापट (स.) *रोमिनिसेन्सेज एण्ड एनेकडोटस ऑफ लोकमान्य तिलक,* खण्ड़–2 (एस.वी. वापट, पूना) पृष्ठ **576**